श्रीः

श्रीसप्तपदीहृदयम् ।

राष्ट्रभाषाऽनुवादसहितम् ।

प्रणेता—

श्रीमान् अमृतवाग्भव आचार्यः

शीघ्र ही प्रकाशित होनेवाला है

पूज्यपाद महामहिम श्रीमदमृतवाग्भवाचार्य प्रणीत

श्रीराष्ट्रालोकका

श्रीराष्ट्रसञ्जीवनसंस्कृतभाष्य

इसके विषयमें संक्षेपसे ही हम ग्राहकोंको सूचित करते हैं कि यह ग्रन्थरत्न सम्पूर्ण साहित्य-सागरका सार है। इसके जोड़का ग्रन्थ आजतक संसारभरके किसी भाषाके साहित्यमें नहीं लिखा गया। ग्रन्थ क्या है, सम्पूर्ण राष्ट्रियविषयोंका हृदय है। इसके लेखक भी एक प्रसिद्ध दार्शनिक महात्मा हैं। ग्रन्थमें प्रणेताने स्वाभाविक पूर्ण विज्ञानके आधार पर सम्पूर्ण मानवकर्तव्य तथा स्वभावका उस विशेषतासे प्रतिपादन किया है, कि जो एक अत्यन्त नवीन, सुललित, स्वभाव शुद्ध, तथा प्रकृतिसिद्ध हो सकती है। बहुत क्या "गागरमें सागर है" और अत्यन्त अद्भुत है। इस ग्रन्थका स्वाध्याय प्रत्येक राष्ट्र हितैषीका परम प्रधान कर्तव्य है। इस ग्रन्थको न पढ़नेवाले आजन्म पछतायेंगे। कई सौ पृष्ठोंमें यह ग्रन्थ समाप्त हुआ है।

निवेदक—

पं० उमादत्त शर्मा राजोपाध्याय

पो० सोलन (बघाट स्टेट)

(शिमला-पंजाब)

पुनर्मुद्रणाद्यधिकारा ग्रन्थकर्त्रधीनाः सन्ति ।

❀ श्रीः ❀

महामहिम–आचार्य

श्रीमदमृतवाग्भवप्रणीतं

श्रीसप्तपदीहृदयम् ।

राष्ट्रभाषाऽनुवादसहितम् ।

अनुवादकः—

श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी

—०—

प्रकाशकः—

श्री पं० कुलवन्तराय शर्मा

पो० बहरामपुर ज़मीदारी,

रोपड़ (पंजाब)

बालूजा प्रेस, फतेहपुरी, देहली में मुद्रित

प्रथमवार २००० } सं० १९९६ वि० { मूल्य विश्वोद्धार

पूज्यपाद महामहिम

श्रीमदमृतवाग्भवाचार्यविरचित

श्री आत्मविलास

मनुष्यमात्रके लिए परम कल्याणकारी व सन्मार्ग-प्रदर्शक यह वही अद्भुत आध्यात्मिक दार्शनिक ग्रन्थ है, जिसके प्रकाशित होते ही दार्शनिक जगत्में हलचलसी मच गई और सैकड़ों प्रतियाँ हाथोंहाथ लग गईं। इस ग्रन्थ को पढ़नेसे स्थित-प्रज्ञता प्राप्त होती है, चित्त शान्त होता है, संसार बाहर भीतर सम्पूर्णरूपसे आनन्दमय प्रतीत होता है। अतः यदि आप भी आत्मा क्या है? और परमात्मा क्या है? ईश्वर जगदुत्पत्ति क्यों और किस प्रकार करता है? हम क्या हैं? और हमें क्या करना चाहिये? दर्शन किसे कहते हैं? उनका प्रारम्भ तथा अन्त कहाँ होता है? उनकी उपपत्ति क्या है? आदि आध्यात्मिक गूढ़ रहस्यों से भलीभाँति परिचित होना चाहते हैं। या सम्पूर्ण दार्शनिक विचारों पर प्रकट किए गये आचार्य्यचरणोंके सर्वथा नवीन मौलिक व अत्युपयोगी विचारोंका ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं तो अवश्य इस ग्रन्थका मनन कीजिये। इसके मनन करते ही आपके सभी सन्देह दूर हो जायेंगे तथा आत्मसाक्षात्कार पूर्ण रूप से प्राप्त होगा। सुन्दरी नामक स्वरचित राष्ट्रभाषाव्याख्या के सहित।

पता—भक्त ला० सावणराम कर्त्ताराम

मु० पो० बहरामपुर जमीदारी, रोपड़ (पंजाब)

श्रीः

प्रस्तावना

इह खलु शिवशक्तिमये विश्वस्मिन्नपि विश्वमण्डले केनाऽपि नु केनाऽपि संसर्गविशेषेण परस्पराऽऽनन्दाय दीव्यद्विश्वं संसृष्टमेव विद्योतते । तत्र स्वस्वसमाजसंस्थापिततत्तन्नियमाऽनुसारेण स्त्रीपुंसौ परस्परं पतिपत्नीभावेन वृणुतो यत्र संस्कारे कर्मणि तत्संस्कारकं कर्म विवाह इति समामनन्ति सदाम्नायरहस्यविदः ।

सोऽयं विवाहो बहुविधः । विशेषेण=नियमविशेषेण पतिपत्नीभावेन परस्परं वहनं=प्रापणं स्त्रीपुंसयोर्यत्रेति योगरूढोऽयं विवाहशब्दः । मन्वादिमहर्षिभिरयं विवाहोऽष्टधा प्रदर्शितः । तत्तत्रैव द्रष्टव्यम् ।

यज्ञेन यज्ञं यजमाना आर्याः सुव्यवस्थास्थापनेन समस्तस्याऽपि जगत आनन्दप्रदानाय संस्कुर्वाणा एव दरीदृश्यन्ते । अत एवोक्तं भगवता—

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः ।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक् ॥ इति

आर्यत्वप्रापकेन विधिना परस्परसम्भावनं कर्म सर्वमपि यज्ञपदव्यवहारमवगाहते । तत्राऽन्तर्मुखतायै यदेव हितं तच्छ्रेष्ठं बहिर्मुखतायै च कनिष्ठम् । श्रेष्ठकर्मणा श्रेष्ठफलप्राप्तिः, कनिष्ठेन च कनिष्ठफलप्राप्तिः । अत एव धर्मपुत्ररतिफलाय विवाहे पूर्वपूर्वस्य श्रैष्ठ्यं बोधितं सनातनैर्महर्षिभिः । भवतु ।

भारतवर्षे खलु सनातनैः पारोवर्यविद्भिः साक्षात्कृतसमस्तजगत्कल्याणसाधनैर्महर्षिभिः संस्थापिते विवाहविधाने कर्मकलापे सर्वोत्तममन्तिमं च कर्म सप्तपदी नाम। अस्य कर्मणः समाप्तावेवाऽच्छेद्यो विवाहो भवति। अतः सर्वश्रेष्ठं कर्मेदं संमन्वते विद्वांसः। अत्र हि कर्मणि वरः सप्त पदानि वधूं स्वात्मना सह सञ्चालयति। सप्तपदसञ्चालनमिदं सप्तश्रेष्ठलोकजयसूचकम्। सप्तैव खलु श्रेष्ठा लोकाः। तत्पर्यन्तमैकमत्येन सह गच्छतोः पूर्णमित्रभावोऽपि स्वरससिद्ध एव। अत एव "साप्तपदीनं सख्यम्"इति महर्षयो निराहुः। सप्तलोकविजयाभिलाषी पुरुषः खलु स्वसाहाय्याय स्वात्मनो बहिर्मुखानन्दपारिपूर्ण्याय च स्त्रियं सप्तधा प्रतिश्रुत्य तत्सप्तलोकविजयाय स्वात्मानं पूर्णप्रतिभूत्वेन प्रतिज्ञाप्य च तया सह पूर्णमित्रभावं स्थापयतीत्यहो धन्येयं भारतीयाऽऽर्यविवाहसंस्कारपरिपाटीषूत्तमाऽन्तिमा च सप्तपदी। तत्र सप्तपद्यामस्यां वरेण क्रियमाणाः सप्त प्रतिज्ञा "एकमिषे" इत्याद्योऽति संक्षिप्ता उक्ता गृह्यसूत्रेषु। तद्हृदयमेव मनोहरपद्यगर्भीकारेण विशदीकृत्य स्फुटीकृतं **"श्रीसप्तपदीहृदयम्"** इति सुगृहीतनामधेयेऽस्मिन् ग्रन्थे।

सुहृज्जनानामाग्रहवशंवदोऽयं जन एतद्ग्रन्थप्रणयने लोकोपकारमपि जानानः प्रणीयेदं ग्रन्थरत्नं विश्वस्मै जनाय हितं प्रार्थयते —

श्रीमतामात्मरूपः—

अ० वा० आचार्यः

॥ श्रीः ॥

❀ भूमिका ❀

इस शिवशक्तिस्वरूप सम्पूर्ण विश्वमण्डलमें किसी न किसी विशेष सम्बन्धसे परस्पर आनन्दके लिए नानाप्रकारसे व्यवहार करनेवाला यह जगत् सम्बद्ध ही दिखाई देता है। उसमें भी अपने अपने समाजोंसे स्थापित किये हुए उन उन नियमोंके अनुसार स्त्री-पुरुष, परस्पर पतिपत्नी-भावसे जिस सभ्य बननेवाले कर्मको स्वीकार करते हैं, उस संस्कारक कर्मको सच्छास्त्रोंके रहस्यको जाननेवाले विद्वान् विवाह कहते हैं।

यह विवाह बहुत प्रकारका होता है। विवाह शब्द योगरूढ़ है। स्त्री और पुरुष नियमविशेषसे पति-पत्नीभावसम्बन्धको परस्पर प्राप्त करते हैं, उस कर्म को विवाह कहते हैं। मन्वादि महर्षियोंने आठ प्रकारका विवाह बतलाया है, वे सब बातें उन्हीं ग्रन्थोंमें देखनी चाहिएं।

यज्ञसे यज्ञपुरुष परमात्माको सन्तुष्ट करनेवाले आर्य लोग सुव्यवस्थाकी स्थापनासे सम्पूर्ण जगत्को आनन्द देनेके लिए संस्कार करते हैं अर्थात् श्रेष्ठ बनाते हुए दिखाई देते हैं। इसीलिए भगवान्ने कहा है कि—

"प्रजापतिने बहुत प्राचीन समयमें प्रजाकी सृष्टि की तथा उनकी सहायताके लिए यज्ञका उपदेशकर उनसे कहा कि इससे सम्पूर्ण प्रकारकी कामनाओंको पूर्ण करलो, यह आपकी इच्छापूर्तिके लिए कामधेनु होगा।"

आर्यत्व प्राप्त करानेवाले विधानसे परस्पर सहायता पहुँचानेवाले सम्पूर्ण कर्मोंका समावेश यज्ञपदमें हो जाता है। उसमें जो कर्म अन्तर्मुखताके लिए हितकर हो वह श्रेष्ठ यज्ञ है। जो बहिर्मुखताके लिए हितकर हो वह कनिष्ठ यज्ञ है। अच्छे कर्मोंसे अच्छे फलोंकी तथा कनिष्ठ कर्मोंसे कनिष्ठ फलोंकी प्राप्ति होती है। इसीलिए धर्म, पुत्र, रति फलके उद्देशसे किये गये विवाहोंमें पूर्व पूर्व विवाहको सनातन महर्षियोंने श्रेष्ठ कहा है, अस्तु।

भारतवर्षमें भूत तथा भविष्यत् जाननेवाले जगत्के कल्याणकारक सम्पूर्ण साधनोंको प्रत्यक्ष देखनेवाले सनातन महर्षियों द्वारा संस्थापित विवाहविधायक कर्मोंमें सर्वोत्तम तथा अन्तिम सप्तपदी नामक कर्म है। इस कर्मके सम्पूर्ण होने पर ही विवाह अटूट माना जाता है। अतः विद्वानोंकी सम्मतिमें विवाहक्रियामें सप्तपदीकर्म सर्वश्रेष्ठ है। इस कर्ममें वर वधूको अपने साथ सात पद चलाता है। सातपदोंको चलानेका यह कर्म सात श्रेष्ठलोकोंका विजयसूचक है। श्रेष्ठलोक सात ही माने गये हैं। सातलोक पर्यन्त एक सम्मतिसे साथ जानेवालोंमें पूर्णमित्रभावकी स्थापना होना स्वयंसिद्ध ही है। इसीलिये महर्षिलोग सख्य (मित्रभाव) का सातपदीन नाम देते हैं। सातों लोकोंके विजयकी अभिलाषा रखनेवाला पुरुष अपनी सहायताके लिये तथा अपने बहिर्मुख आनन्दकी परिपूर्तिके लिए स्त्रीके सम्मुख सात प्रकारकी प्रतिज्ञासे उसके सात लोकोंकी विजयके लिए अपने आपको पूर्णरूपसे प्रतिभूत्व (उत्तरदायित्व) की प्रतिज्ञा करता हुआ उस स्त्रीके साथ पूर्ण मित्रभाव स्थापित करता है। भारतीय आर्य विवाहसंस्कार कर्ममें अत्युत्तम तथा अन्तिम यह क्रिया कितनी सुन्दर एवं आदर्शपूर्ण है। इस सप्तपदीमें वरके द्वारा की जानेवाली ये सात प्रतिज्ञाएं गृह्यसूत्रोंमें "एकमिषे" इत्यादि वाक्योंसे बहुत ही संक्षिप्तरूपमें कही गयी हैं। उन्हींका हृदय (रहस्य) मनोहर श्लोकोंमें खोलकर अतिसुन्दर नामवाले इस "श्रीसप्तपदी हृदय" नामक ग्रन्थमें स्पष्ट किया गया है।

मित्रमण्डलीके आग्रहसे तथा इस ग्रन्थनिर्माणसे लोकोपकार होगा, ऐसा जानकर इस ग्रन्थरत्नको बनाकर सम्पूर्णलोगोंके हितके लिए प्रार्थना करता है—

अनुवादक—
पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी ज्यो०
कुराली (पंजाब)

आपका अपना आप—
अ० वा० आचार्य

॥ श्रीः ॥

श्रीसप्तपदीहृदयम् ।

महामहिम-आचार्य श्रीमदमृतवाग्भवप्रणीतम् ।

शिवशक्तिमयं विश्वं परस्परसुखाप्तये ॥
विवाहितं विजयते सप्तपद्या प्रतिश्रुतम् ॥ १ ॥

शिवशक्तिमय सम्पूर्ण जगत् एक दूसरेसे परस्पर सुख उठानेके लिए सप्तपदीसे प्रतिज्ञाबद्ध होकर विवाहित होता है, इसी लिए सर्वत्र उसीका विजय हो रहा है ॥ १ ॥

प्रथमपदे वर आह—(१)

मदतिथिगुरुपुत्रभ्रातृवर्गं समस्तं
विविधविधिविधानैः साधितैरन्नपानैः ॥
इह हि परिचरन्ती माननीया स्वराष्ट्रे
भवसि जयसि लोके मद्गृहस्था सुधाशे ! ॥२॥

प्रथमपदमें वर कहता है—(१)

हे अमृत भोजन करनेवाली ! मेरे अतिथि, माता पिता आदि गुरुजन, पुत्र शिष्यादि दयाके पात्र और भाई बहन मित्रादि समानताके अधिकारी वर्ग, इन सबोंको नाना प्रकारसे बनाये हुए सुरुचिकारक तथा हितकारक खाने पीनेके पदार्थोंसे सन्तुष्ट

करती हुई तुम अपने राष्ट्र † में माननीय होगी तथा मेरे घरमें रहकर ही इस भूलोकको जीत भी लोगी। कारण कि तुम अमृत भोजन करनेवाली (समस्त परिवारको खिला पिलाकर पीछे स्वयं भोजन करनेवाली) हो इस बातको मैं भली भाँति जानता हूँ ॥२॥

इषे नयाम्यहं विष्णुस्त्वां सुन्दरि ! सुधाशने ॥
पदमेकमिति प्रोक्ते पत्या प्राह वधूरिदम् ॥ ३ ॥

हे अमृत भोजन करनेवाली सुन्दरि ! विष्णुरूप मैं (वरको विष्णुरूप समझकर कन्यादान किया जाता है) अन्नके लिए तुम्हें एक पद अपने साथ ले चल रहा हूँ ॥३॥

प्रथमपदे वधूराह—

त्वदार्जितैरन्नवरैः सुरद्यैः
सुपाचितैस्त्वां परितोषयामि ॥
तव स्ववर्गं च समस्तमेव
त्वदाज्ञया साधु सभाजयामि ॥४॥

आपके घरमें लाये हुए खाने पीनेके श्रेष्ठ पदार्थोंको सावधानीसे देख भालकर बनाती हुई आपको तथा आपके सम्पूर्ण परिवारको सन्तुष्ट करूंगी और आपकी आज्ञानुसार सबसे प्रेम रखती हुई सबको सेवा करूंगी तथा पतिव्रताओंके समाजको भी जीत लूंगी ॥४॥

---

† राष्ट्रके विषयमें विस्तृत विवेचन पूज्यपाद सर्वतन्त्रस्वतन्त्र आचार्यचरण श्रीमदमृतवाग्भवजी महाराजके बनाये हुए श्रीराष्ट्रालोक और श्रीराष्ट्रसंजीवन भाष्यमें देखिये। —अनुवादक

द्वितीयपदे वर आह—(२)

शौचाऽऽचारविचारसाधितपरीणाहेन सम्पोषितः
स्वो वर्गोऽहमपि प्रसन्नहृदयः साराङ्गयष्टिः सदा ॥
ऊर्जस्वि प्रभवामि कर्तुमखिलं राष्ट्रं स्वकीयं महत्
तस्माच्चारुदृढाङ्गशोभिनि ! भुवर्लोकं मया यास्यसि ॥५॥

दूसरे पदमें वर कहता है—

हे सुन्दर तथा दृढ़ शरीरावयववाली ! पवित्रता आचार विचारादि द्वारा ठीक की हुई घरकी सम्पूर्ण वस्तुओंसे परिपुष्ट मेरा परिवार और मैं प्रसन्नहृदय होकर सर्वदा सुदृढ़ शरीर होऊंगा, जिससे कि मैं अपने सम्पूर्ण महान् राष्ट्रको शरीरशक्ति तथा प्राणशक्तिसे सुदृढ़ बना सकूं, उससे तुम मेरे साथ भुवर्लोकको चल सकोगी ॥५॥

उर्जे नयाम्यहं विष्णुस्त्वां चारुदृढविग्रहे ! ॥
पदद्वयमिति प्रोक्ते पत्या प्राह वधूरिदम् ॥६॥

हे सुन्दर तथा दृढ़ शरीरवाली ! विष्णुरूप मैं शरीरशक्ति तथा प्राणशक्तिकी उन्नतिके लिए दो पद तुमको अपने साथ ले चल रहा हूँ, ऐसा पतिके कहने पर वधू यह कहती है ॥६॥

द्वितीयपदे वधूराह—

यथाबलं त्वद्गृहपारिणाह्यं
परीक्ष्य शौचादिविधानतोऽहम् ॥
उर्जप्रदं रोगहरं त्वदर्थे
कुटुम्बपुष्ट्यै परिसाधयामि ॥७॥

दूसरे पदमें वधू कहती है—

आपकी तथा आपके परिवारकी पुष्टिके लिए मैं अपने शरीर तथा प्राणशक्तिके अनुसार घरकी प्रत्येक वस्तुको पवित्रता आचार विचारादिके वर्तावसे देख भालकर शरीर तथा प्राणशक्ति से भरपूर एवं रोगनाशक बनाउँगी ॥ ७ ॥

तृतीयपदे वर आह—(३)

द्रव्यक्षेमविचारभारमखिलं दत्त्वा त्वदीये करे
नानोपायविधानतः स्वयमहं द्रव्याणि सम्प्रार्जयन्॥
स्वं राष्ट्रं धनपूरितं विरचयन्नर्थज्ञधुर्ये ! शुभे !
स्वर्लोकं प्रभवामि जेतुमिह हि प्राज्ये स्वराष्ट्रे त्वया ॥८॥

तीसरे पदमें वर कहता है—

हे कल्याणी ! धनकी रक्षाके सम्पूर्ण विचार का भार तुम्हारे हाथोंमें सौंप दूंगा, क्योंकि तुम अर्थशास्त्रकी जाननेवाली हो। मैं अनेक तरहके उचित उपायोंसे द्रव्योंका स्वयं उपार्जन करूंगा तथा अपने राष्ट्रको धनसे भरपूर करता हुआ इसी लोकमें तुम्हारे साथ अपने समृद्ध राष्ट्रमें रहता हुआ स्वर्गलोकको जीत सकूंगा ॥ ८॥

रायस्पोषाय विष्णुस्त्वामर्थविज्ञे! नयाम्यहम् ॥
पदत्रयमिति प्रोक्ते पत्या प्राह वधूरिदम् ॥६॥

हे अर्थशास्त्रकी जाननेवाली ! विष्णुरूप मैं धनकी समृद्धि के लिए तुमको तीन पद अपने साथ ले चल रहा हूँ, ऐसा पतिके कहने पर वधू यह कहती है ॥ ९ ॥

तृतीयपदे वधूराह—

गार्हस्थ्यसाधनसमस्तपदार्थवर्ग-
मूलं धनं विधिवदर्जितमस्ति यत्ते ॥
आयव्ययादि सुपरीक्ष्य निदेशतस्ते
त्वत्प्रीतये बहुविधं परिवर्द्धयामि ॥१०॥

तीसरे पदमें वधू कहती है—

आपके घरमें उचित उपायोंसे प्राप्त किया हुआ जो भी कुछ आपका धन होगा, उसको आपकी आज्ञानुसार आय व्यय जाँचकर बहुत प्रकारसे बढ़ाऊँगी, क्योंकि गृहस्थीके सम्पूर्ण पदार्थोंको प्राप्त करनेके लिए धनही मूल कारण होता है, इस बातको मैं भली भांति जानती हूँ ॥ १० ॥

चतुर्थपदे वर आह—(४)

संरक्षां ननु पारिणाह्यविषयां सौख्यप्रदानोद्धुरे !
नानाऽऽशंसितवस्तुसंग्रहधुरामारोप्य शीर्षे तव ॥
तत्तत्सौख्यनिमित्तवस्तुभरितं राष्ट्रं समृद्धं स्वकं
कुर्वन्कीर्तिमवाप्नुवन्निह महर्लोकं जयामि त्वया ॥११॥

चौथे पदमें वर कहता है—

घरमें सर्व प्रकारकी आवश्यक वस्तुओंके संग्रहका भार तथा घरकी सम्पूर्ण वस्तुओंके संरक्षणका भार तुम्हारे शिर पर ही रक्खूंगा, क्योंकि प्रत्येक वस्तुको सुखकारक बनानेमें तुम बहुत चतुर हो । उन उन सुखकारक वस्तुओंसे अपने राष्ट्रको समृद्ध करता हुआ मैं तुम्हारे साथ इस लोकमें विशुद्ध कीर्तिको प्राप्त कर महर्लोकको जीत सकूंगा ॥११ ।

मायोभवाय विष्णुस्त्वां सुखविज्ञे! नयाम्यहम् ॥
चतुष्पदमिति प्रोक्ते पत्या प्राह वधूरिदम् । १२ ॥

हे सुखतत्त्वको जाननेवाली ! सांसारिक पदार्थोंसे सुखके लिए विष्णुरूप मैं तुमको चार पद अपने साथ ले चल रहा हूँ, ऐसा पतिके कहने पर वधू यह कहती है ॥१२॥

चतुर्थपदे वधूराह—

आवश्यकानि विविधानि गृहे त्वदीये
वस्तूनि यानि गृहिणां सुखसाधनानि ॥
तेषामहं समुदयं विरचय्य नूनं
त्वामात्मवर्गसहितं सुखयामि शश्वत् ॥१३ ॥

चौथे पदमें वधू कहती है—

गृहस्थियोंके लिए सुखकारक तथा आवश्यक जो भी वस्तुएँ होती हैं, उन प्रत्येक प्रकारकी सम्पूर्ण वस्तुओंका संग्रह तथा संरक्षण करती हुई मैं आपको तथा आपके परिवारको निरन्तर सुख दूंगी, यह आप निश्चय रखिये ॥१३॥

पञ्चमपदे वर आह—(५)

मेधाकान्तिबलाऽगदत्वरचनं गव्यं परं कारणं
तन्मूलं पशुवृन्दपालनमतस्त्वां तद्व्यवस्थापने ॥
वार्ताज्ञे ! विनियोज्य राष्ट्रभरणे कुर्वन् प्रयत्नं सदा
जानं लोकमहं त्वया सह पुनर्जेष्यामि शुद्धाशये! ॥१४॥

हे शुद्ध हृदयवाली! मेधा (स्मृतिशक्ति) कान्ति, बल, नीरोगता आदिका मूल कारण गोरस (दुग्ध घृतादि) ही है. यह (गोरस) बिना पशुओंके प्राप्त नहीं हो सकता, अतः पशुपालन अत्यन्त आवश्यक है। तुम वार्ताशास्त्र (खेती, पशुपालन और व्यापार) की जाननेवाली हो, इसलिए पशुओंकी व्यवस्थाका भार भी तुम्हें सौंपकर मैं अपने राष्ट्रको प्रत्येक प्रकारसे समृद्धिशालि बनानेका प्रयत्न करता हुआ तुम्हारे साथ जनलोकको जीत लूंगा ॥ १४ ॥

पश्वर्थं विष्णुरूपो हे वार्ताज्ञे! त्वां नयाम्यहम् ॥
पदपञ्चकमित्युक्ते पत्या प्राह वधूरिदम् ॥ १५ ॥

हे वार्ताशास्त्र जाननेवाली! पशुओंके लिए विष्णुरूप मैं तुमको पांच पद अपने साथ ले चल रहा हूँ, ऐसा पतिके कहने पर वधू यह कहती है ॥ १५ ॥

पञ्चमपदे वधूराह—

दधिदुग्धघृतादिसाधनं
कृषिवाणिज्यनिमित्तमस्ति यत् ॥
सुखदं परमं कुटुम्बिनां
पशुवृन्दं परिपालयामि तत् ॥१६॥

पांचवें पदमें वधू कहती है—

खेती तथा व्यापार जिनके आधार पर होता है, दही दूध घृत आदि पोषक पदार्थ जिनसे प्राप्त होता है, गृहस्थियोंके लिए जो अत्यन्त सुखदायक हैं, उन पशुओंकी व्यवस्था मैं भली-भांति करूँगी ॥ १६ ॥

षष्ठपदे वर आह—(६)

आत्माऽयं परमो बहिर्मुखमहाऽऽनन्दाय बद्धीकृत-
स्तस्मात्त्वां परिणीय चित्तरचितं सर्वर्तुसौख्यं भजन् ॥
राष्ट्रप्रीणनतत्परं सुयशसं वंशं प्रतिष्ठापयन्
जेष्यामि प्रथितं त्वया सह तपोलोकं विशुद्धाशये ! ॥१७॥

छठे पदमें वर कहता है—

हे विशुद्ध कामनावाली ! मैंने अपने आपको बहिर्मुख महान् आनन्दके उपभागकी लालसासे अपने परिपूर्ण परब्रह्म परशिव-भावको छुपाकर जीवभावमें बद्ध किया है, इसलिए तुम्हारे साथ विवाह कर चित्तसे सङ्कल्पित नाना प्रकारके उन उन ऋतुओंके सम्पूर्ण सुखोंको प्राप्त करता हुआ मैं तुम्हारे साथ, राष्ट्रको सन्तुष्ट करनेमें संलग्न विशुद्ध कीर्तिशाली वंशकी प्रतिष्ठा कर अत्यन्त प्रसिद्ध उस तपोलोकको भी जीत लूंगा ॥१७॥

विशुद्धकामने ! विष्णुर्ऋतुभ्यस्त्वां नयाम्यहम् ॥
पदषट्कमिति प्रोक्ते पत्या प्राह वधूरिदम् ॥१८॥

हे विशुद्ध कामनावाली ! विष्णुरूप मैं सम्पूर्ण ऋतुओंके सुखके लिये तुमको छह पद अपने साथ ले चल रहा हूँ। ऐसा पतिके कहने पर वधू यह कहती है ॥१८॥

षष्ठपदे वधूराह—

अद्वैतभावमुपगम्य तवाज्ञयैव
तत्तद्-हृषीकसुखसाधनतामुपेता ॥
सर्वासु तासु ऋतुषु त्वयि बद्धभावा
त्वामर्चयामि नितरां परितोषयामि ॥१९॥

छठे पदमें वधू कहती है—

आपकी आज्ञासे आपके साथ अद्वैतभावको प्राप्तकर उन उन सम्पूर्ण इन्द्रियोंके सुखोंका साधन मैं बनूंगी, और उन सम्पूर्ण ऋतुओंमें केवल आपमेंही परिपूर्ण भाव रखती हुई आप की पूजा करूँगी, तथा आपको अत्यन्त सन्तुष्ट करूँगी ॥ १६ ॥

सप्तमपदे वर आह—(७)

सख्यं साप्तपदीनमत्र मुनयः सम्पूर्णमाहुः सदा
तेन त्वामभिगम्य सप्तममहं लोकं जयामि ध्रुवम् ॥
मोक्षार्थं हृदयं विधाय भवती राष्ट्रस्य सम्भावने
मामेवाऽनुगता भविष्यति तदा मोक्षो न ते दुर्लभः ॥२०॥

सातवें पदमें वर कहता है—

संसारमें सात पद साथ चलनेसे परिपूर्ण मित्रता होती है ऐसा विचारशील विद्वानोंका कहना है। मैं भी उसी साप्तपदीन मित्रभावसे तुमको प्राप्त कर सातवें लोक (सत्यलोक) को भी निश्चयसे जीत लूंगा। मोक्ष प्राप्तिके लिए राष्ट्रकी समुन्नतिमें अपने हृदयको लगाकर मेरे पीछे पीछे चली आओ तो तुम्हें मोक्षभी दुर्लभ नहीं है ॥ २० ॥

वध्वाः प्रतिश्रुतं ज्ञात्वा पतिः प्राहैवमुत्तमम् ॥
सखे ! सप्तपदा भव सा मामनुव्रता भव ॥२१॥

वधूकी स्वीकृति जानकर अन्तमें पति कहता है, हे सखे! मेरे साथ सात पद चलकर पूर्णमित्रभावको प्राप्त कर, तथा सब प्रकारसे मेरा अनुसरण कर ॥२१॥

सप्तमपदे वधूराह—

प्राप्तं मया मनुजदेहफलं समस्तं
यत्सख्यमुत्तममहं भवता गताऽद्य ॥
सर्वं प्रतिश्रुतमिदं हृदये दधाना
त्वामेव पूर्णहृदयेन नु कामयिष्ये ॥२२॥

सातवें पदमें वधू कहती है—

आप जैसे सुयोग्य पुरुषसे सप्तपदा परिपूर्ण मैत्रीको प्राप्त-कर आज मैंने मनुष्य देह धारण करने का सम्पूर्ण फल प्राप्त कर लिया है। हम दोनोंकी प्रतिज्ञाको पूर्णरूपसे हृदयमें धारण करती हुई मैं आपहीको पूर्ण हृदयसे सर्वदा चाहूँगी, यह आप निश्चय रखिये ॥२२॥

श्रीसप्तपदीहृदयं प्रणीय शास्त्रानुकूलमर्थज्ञः ॥
वाञ्छति विश्वोद्धारं श्रीमदमृतवाग्भवाचार्यः ॥२३॥

यथार्थ वस्तुको जाननेवाला श्रीमान् आचार्य अमृतवाग्भव शास्त्रोंके अनुकूल इस श्रीसप्तपदी हृदयको बनाकर जगत्के उद्धार की इच्छा रखता है ॥ २३ ॥

षडङ्कनन्देन्दुमिते गते वैक्रमवत्सरे ॥
एकादश्यां रवौ माघे कृष्णपक्षे कृतिः कृता ॥२४॥

यह ग्रन्थ सं० १९९६ वि० माघ कृष्ण ११ रविवारको बनाया ॥ २४ ॥

इति श्री सर्वतन्त्रस्वतन्त्र महामहिम-आचार्य श्रीमदमृतवाग्भव-प्रणीतं श्रीसप्तपदीहृदयम् ॥

नस २ में राष्ट्रप्रेम व उत्साह भर देने वाला
पूज्यपाद महामहिम श्रीमदमृतवाग्भवाचार्य प्रणीत

अनुपम राष्ट्रीय ग्रन्थ

श्रीराष्ट्रालोक

इसके अध्ययन से राष्ट्रिय व्यक्तियों के सम्पूर्ण कर्तव्य, राष्ट्रको स्वतन्त्र व उन्नत करने के उपाय तथा राष्ट्र किसे कहते हैं उसपर किसका अधिकार होता है ? आदि विभिन्न राष्ट्रिय विषयों का सम्पूर्ण ज्ञान हो जाता है। श्लोकों की भाषा इतनी सरल है कि साधारण संस्कृतज्ञ भी पूरा लाभ उठा सकता है। 'सरस्वती' 'स्वराज्य' 'संस्कृतम्' 'विश्वबन्धु 'मारवाड़ी ब्राह्मण' 'हिन्दीमिलाप' आदि २ पत्र पत्रिकाओं तथा अनेकों बड़े २ राष्ट्रिय नेताओंने इसकी मुक्तकंठसे प्रशंसा की है। अधिक क्या गागरमें सागर है। मू० ≡)

पूज्यपाद-महामहिम-श्रीमदमृतवाग्भवाचार्य प्रणीत

श्रीपरशुरामस्तोत्र

राष्ट्रभाषाऽनुवादसहित।

यह एक अत्यन्त ओजस्विनी भाषामें लिखा हुआ भगवान श्रीपरशुरामका स्तोत्र है। भारतके अनेकों पत्र पत्रिकाओंने तथा विद्वानोंने इसकी मुक्तकण्ठसे प्रशंसा की है। उनमेंसे एक यहाँ उद्धृत करते हैं—

"यह ग्रन्थ अवश्य ही भारतीयोंमें भगवद्भक्ति एवं दुःशासनान्त-करणी शक्ति का सञ्चार करेगा। अतः प्रत्येक राष्ट्रभक्तका कर्तव्य है कि वह इसे अवश्य पढ़े, यह ग्रन्थ भव्य चित्रसे सुसज्जित है" द्वितीय संस्करण छप रहा है।

पता—भक्त ला० सावणराम कर्तारामं,
मु० पो० बहरामपुर जमीदारी, रोपड़ (पंजाब)

श्रीः

१. श्रीपरशुरामस्तोत्रम् ।

विशेष विवरण भीतर देखें ।

=) के टिकट भेजकर प्राप्त करें ।

२. श्रीराष्ट्रालोकः

विशेष विवरण भीतर देखें ।

मूल्य ≡) तीन आना ।

३. श्रीआत्मविलासः

विशेष विवरण भीतर देखें ।

मूल्य २) रुपया ।

४. श्रीसप्तपदीहृदयम् ।

आपके हाथों में ही है ।

बिना मूल्य ।

(केवल डाकखर्च के लिये -) का टिकट भेजें)

सभी पुस्तकें प्राप्त करने का स्थान—

भक्त-ला० सांवणराम कर्ताराम

पो० बहरामपुर जमीदारी,

रोपड़ (पञ्जाब)

बालूजा प्रेस, देहली में मुद्रित ।